मेरे लिए बड़े गौरव की बात है कि मुझे राजस्थान की राजधानी जयपुर में भारत के विधानमंडलों के गण्यमान्य सदस्यों के बीच उपस्थित होने का सुअवसर प्राप्त हुआ है । वास्तव में, यह एक अविस्मरणीय अनुभव है ।

इस संगोष्ठी का विषय 'संवैधानिक नियंत्रण और निरीक्षण प्रणाली को सुदृढ़ करना', निस्संदेह, प्रत्येक लोकतंत्र के लिए अत्यधिक प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है । राज्य के विभिन्न अंगों अर्थात् कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों का कार्यात्मक वितरण लोकतंत्र के उद्भव का एक अविभाज्य अंग है । लिखित संविधान द्वारा शासित देशों में संविधान ही सर्वोपरि है ।

भारत में विभिन्न संवैधानिक अंगों की शक्तियों का वियोजन हमारे संविधान की एक महत्वपूर्ण विशेषता है जो संसदीय लोकतंत्र को शक्ति और स्थायित्व प्रदान करता है और संविधान में प्रदत्त नियंत्रण और निरीक्षण की संवैधानिक प्रणाली को सुदृढ़ बनाता है । यह आशा की जाती है कि राज्य के तीनों मूल अंग सौहार्दपूर्ण तरीके से मिलकर कार्य करेंगे और इस सिद्धान्त के अंतर्गत एक-दूसरे के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करेंगे । यह हमारे संविधान के निर्माताओं द्वारा परिकल्पित संवैधानिक संतुलन को बनाए रखने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है । चूंकि संविधान सरकार के विभिन्न अंगों की शक्तियों और अधिकार क्षेत्र को परिभाषित करता है, उनके उत्तरदायित्वों को निर्धारित करता है तथा उनके परस्पर संबंधों को सविस्तार विनियमित करता है, इसलिए अस्पष्टता की कोई गुंजाइश नहीं है ।

संसद सर्वोच्च विधायी निकाय है और इसे हमारे देश की राजनैतिक संरचना में अति महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । चूंकि, संसद सदस्यों का चयन जनता के द्वारा किया जाता है, उनके द्वारा बनाए गए कानूनों में जनता की आशा, आकांक्षा और इच्छा परिलक्षित होती है । इन कानूनों को लागू करने का दायित्व कार्यपालिका का है जो विधायिका के प्रति उत्तरदायी है । तथापि, भारत में संसद और विधानमंडलों की शक्तियों को संविधान द्वारा सीमित किया गया है । इसके अतिरिक्त, संविधान निर्माताओं ने संविधान के अन्तिम व्याख्याता और नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता के संरक्षक के रूप में स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायपालिका के प्रावधान पर भी पर्याप्त ध्यान दिया है । *हम सभी संविधान से बंधे हुए हैं किन्तु संविधान वही है जैसी न्यायालय उसकी व्याख्या करता है* । संवैधानिक उपबंधों का पालन किया जा रहा है अथवा नहीं इसके बारे में अंतिम निर्णय लेने का अधिकार न्यायपालिका के पास है ।

संविधान के उपबंधों के अध्यधीन, संसद और राज्य विधानमंडल अपनी प्रक्रियाओं को स्वयं विनियमित करते हैं और संसद अथवा राज्य विधानमंडलों की किसी भी सभा की किसी भी कार्यवाही की वैधता को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती ।

इसी प्रकार, कार्यपालिका और विधायिका से न्यायपालिका की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने हेतु संविधान में इस आशय के भी विशिष्ट उपबन्ध किए गए हैं कि किसी न्यायाधीश को हटाने के लिए राष्ट्रपति को प्रस्तुत किए जाने हेतु मूल प्रस्ताव के अतिरिक्त उच्चतम न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के आचरण के बारे में संसद में कोई चर्चा नहीं की जा सकती ।

यद्यपि, विधानमंडलों और इनके सदस्यों को देश और जनता पर शासन से संबंधित सभी मामलों पर चर्चा और विचार करने की स्वतंत्रता है

तथापि, भाषण की स्वतंत्रता पर कुछ हद तक स्वयं-स्वीकार्य कुछ पाबंदियां हैं । ऐसी ही एक पाबंदी यह भी है कि न्यायालय के समक्ष लंबित मामलों पर सभा में चर्चा नहीं की जानी चाहिए । किसी न्यायाधीन मामले विशेष पर चर्चा करने अथवा न करने के बारे में निर्णय अध्यक्ष द्वारा मामले के गुणावगुण के आधार पर किया जाता है ।

चूंकि संविधान में संघ और राज्यों के बीच विधायी शक्तियों का सीमांकन किया गया है, अतः संसद और राज्य विधानमंडलों की शक्तियां संविधान की 7वीं अनुसूची की संबंधित सूचियों में दिए गए मामलों तक ही सीमित हैं । किसी भी अधिकार के अतिक्रमण की न्यायालयों द्वारा न्यायिक समीक्षा की जा सकती है और न्यायालयों के पास संसद तथा राज्य विधानमंडलों द्वारा बनाए गए कानूनों को संविधान के अधिकार क्षेत्र से परे मानकर उन कानूनों को रद्द करने की शक्ति है ।

विश्व भर में न्यायिक समीक्षा की शक्ति को बहुत सम्मान से देखा गया है । तथापि, चूंकि न्यायाधीशों का निर्वाचन जनता द्वारा नहीं किया जाता जबकि संसद सदस्य निर्वाचन प्रणाली के माध्यम से आवधिक रूप से जनता के प्रति जवाबदेह रहते हैं, हमारे संविधान निर्माताओं ने अपने विवेक से यह उपबंध किया कि न्यायपालिका कानून बनाने की पहल न करके, मात्र उनकी व्याख्या करेगी ।

कानून बनाने की पहल करने का प्राधिकार केवल कार्यपालिका को ही है । ऐसा इसलिए है क्योंकि केवल कार्यपालिका को ही उन समस्याओं की जटिलताओं को समझने की विशेषज्ञता प्राप्त है जिनके समाधान के लिए विधि निर्माण की आवश्यकता है और जिसके लिए उसके पास तंत्र मौजूद है । संसद और विधानमंडल विधान बनाने के लिए

कार्यपालिका के विवेक के संबंध में निर्णय ले सकते हैं तथा सरकार द्वारा लाए गए विधेयक के उपबन्धों में संशोधन कर सकते हैं । अन्ततः, जब यह देश का कानून बन जाता है तो इसे संविधान के अन्य उपबंधों के अतिक्रमण के आधार पर ही चुनौती दी जा सकती है ।

शक्ति विभाजन सिद्धांत के वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए नियंत्रण और निरीक्षण प्रणाली का होना नितांत आवश्यक है । आम धारणा के विपरीत, यह प्रणाली इस सिद्धांत के विरुद्ध नहीं है बल्कि यह वास्तविक प्रयोग को सुदृढ़ करने के लिए आवश्यक है । तथापि, इस विषय पर सतत चिंतन आवश्यक है कि क्या शक्तियों का समुचित आवंटन किया गया है और क्या राज्य के विभिन्न अंगों के भीतर और विभिन्न अंगों के बीच स्थापित नियंत्रण तंत्र, प्रदत्त शक्तियों के दुरुपयोग को रोकने हेतु सुरक्षोपाय के रूप में पर्याप्त हैं ।

हाल ही में, न्यायिक सक्रियता संविधान विशेषज्ञों, विधिवेत्ताओं और अन्य लोगों का ध्यान आकर्षित करती रही है । कुछ सांसदों और विधायकों का मत है कि न्यायपालिका यदा-कदा अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन कर कार्यपालिका और विधायिका के क्षेत्र में प्रवेश कर जाती है । न्यायिक सक्रियता के पक्षधर इसे न्यायिक शक्ति जो न्यायिक समीक्षा प्राधिकरण और विधि के शासन तथा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए आवश्यक अन्तर्निहित तंत्र का एक अंग है, की सामान्य बात मानते हैं । ''राज्य के सभी अंगों के बीच परस्पर समन्वय अति आवश्यक है । यदि वे अपनी विनिर्दिष्ट सीमाओं का अतिक्रमण करेंगे तो उन सभी का अहित होगा और इस प्रक्रिया में अंततः व्यापक राष्ट्रीय हित को क्षति पहुँचेगी''। यदि विधायिका कार्यकरण में निष्पक्ष नहीं रहती है तो

न्यायपालिका को उसे अपने कार्यों में निष्पक्ष रहने की बाध्यता का स्मरण कराने के लिए हस्तक्षेप करना पड़ता है । इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो दोनों अंगों के बीच अपने कार्य-निष्पादन में टकराव का कोई कारण दिखाई नहीं देता क्योंकि दोनों के लक्ष्य एक ही हैं । विधायिका और न्यायपालिका, दोनों, संविधान और समाज के उद्देश्यों की प्राप्ति तथा नियंत्रण और निरीक्षण की संवैधानिक प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए सामंजस्य के साथ काम कर रही हैं ।

राज्य के विभिन्न अंगों के सुव्यवस्थित तथा निर्बाध कार्यकरण के संबंध में मैं यह मानती हूँ कि किसी भी अंग को दूसरे अंग के कार्यों एवं अधिकार क्षेत्र में अतिक्रमण नहीं करना चाहिए और न ही अपने अनिवार्य कार्यों की अवहेलना करके संविधान में प्रदत्त नियंत्रण और निरीक्षण की संवैधानिक प्रणाली के महत्व को कम करना चाहिए । मैं इस बात पर जोर देना चाहती हूँ कि इनमें से प्रत्येक को एक-दूसरे की भूमिका को सही परिप्रेक्ष्य में और संविधान की भावना के अनुरूप सोचना और समझना चाहिए । जब संस्थाएं पूर्णतः अपने निर्धारित कार्यक्षेत्र में कार्य करती हैं तो न केवल उनके प्रति जनता में सम्मान बढ़ता है अपितु सम्पूर्ण व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए आदर्श परिस्थितियों का निर्माण भी होता है ।

संसदीय लोकतंत्र के सिद्धान्त इस धारणा पर आधारित हैं कि जनता ही संविधान की रक्षक है । शासन की संस्थाएं, संविधान तथा देश की जनता के प्रति जवाबदेह हैं । संविधान अपने आप में केवल एक दस्तावेज मात्र है परन्तु यह तभी प्रभावी होता है जब इसका कार्यान्वयन करने वाले लोग इसके उपबन्धों को सावधानीपूर्वक लागू करते हैं ।

यह निर्विवाद तथ्य है कि लोकतंत्र के प्रभावी कार्यकरण के लिए शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धान्त एक पूर्वापेक्षा है । मुझे पूरा विश्वास है कि नियंत्रण और निरीक्षण की संवैधानिक प्रणाली पर इस संगोष्ठी में उभर कर आ रहे विचार और परिदृश्य इस महत्वपूर्ण विषय पर उपयोगी और सार्थक विचार-विमर्श का मार्ग प्रशस्त करेंगे ।

माननीय राज्यपाल श्री शिवराज वी. पाटिल जी, माननीय मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत जी, राजस्थान विधान सभा के माननीय अध्यक्ष, श्री दीपेन्द्र सिंह शेखावत जी, माननीय मंत्रिगण और विधान सभा सचिवालय के सभी अधिकारियों और कर्मचारियों को जयपुर में भारत के विधायी निकायों के पीठासीन अधिकारियों के 76वें सम्मेलन की महत्ती सफलता के लिए हार्दिक धन्यवाद । यहां के निवासियों ने अपने स्वागत-सत्कार से हम सबका मन मोह लिया है । मैं उन्हें अपनी शुभकामनाएं देती हूँ ।

धन्यवाद ।

It is a matter of great honour for me to be amidst the distinguished members of the Legislative fraternity of India in the capital city of Rajasthan, Jaipur. It is indeed a memorable experience.

The theme of this Symposium "Strengthening Constitutional Scheme of Checks and Balances" is undoubtedly of great relevance and significance for democracies everywhere. Functional distribution of powers among various organs of the State, namely, the Executive, the Legislature and the Judiciary, is an inseparable part of the evolution of democracy. In countries governed by a written constitution, the supreme authority is the Constitution itself.

In India, the separation of powers of the different State organs is an integral feature of the Constitution, giving strength and sustenance to parliamentary democracy and reinforcing the constitutional scheme of checks and balances. The three primary organs of the State are expected to work harmoniously and in tandem and not encroach into each other's area of jurisdiction under this doctrine. This is crucially important to maintain the balance envisaged by the framers of our Constitution. As the Constitution defines the powers and jurisdiction of the various organs of the Government, demarcates their responsibilities and regulates their relationship in sufficient detail, there should not be any scope for ambiguity.

The Parliament is the supreme legislative body and has been accorded a pre-eminent position in our country's political set up. Since the members of Parliament are elected by the people,

the laws enacted by them reflect the hopes, aspirations and the will of the people. The responsibility of enforcing these laws is entrusted to the Executive which in turn is accountable to the legislature. However, the powers of the Parliament and the Legislatures in India are circumscribed by the Constitution itself. In addition, the framers of the Constitution also took care to provide for an independent and impartial judiciary as a final interpreter of the Constitution and as a custodian of the rights and liberties of the citizens. *We are all bound by the Constitution but the Constitution is what the Judges say it is.* The final power of deciding whether the constitutional provisions are adhered to rests with the judiciary.

Subject to the provisions of the Constitution, the Parliament and the State Legislatures regulate their own procedure and the validity of any proceedings in either Houses of Parliament or State Legislatures is not open to legal scrutiny in the Court of Law.

Similarly, in order to ensure independence of judiciary from the Executive and the Legislature, specific provisions have been made in the Constitution to provide that the conduct of the Judges of the Supreme Court and High Courts cannot be discussed in Parliament except upon a substantive motion for presenting an address to the President for removal of a Judge.

Although the Legislatures and Members thereof have the freedom to discuss and deliberate upon all matters pertaining to the governance of the country and its people, certain restrictions on this freedom of speech have, to some extent, been self-imposed. One such restriction is that

discussions on matters pending adjudication before courts of law should be avoided on the floor of the House. The question whether a particular *sub judice* matter is to be discussed or not is decided by the Speaker on the merits of each case.

Since the Constitution demarcates the legislative powers between the Union and the States, the powers of the Parliament and the State Legislatures are confined to matters enumerated in the respective lists of the 7th Schedule of the Constitution. Any transgression is open to judicial review by the Courts and the Courts have armed themselves through this device with the power to strike down laws made by Parliament and State Legislatures as being *ultra vires* of the Constitution.

World over, the power of judicial review has been viewed with great respect. However, since Judges are not elected by the people unlike the Members of the Parliament who are accountable to their electorate through elections, the Founding Fathers of our Constitution, in their wisdom, provided that the judiciary will only interpret the laws and not initiate the laws.

Initiation of legislation is purely the prerogative of the Executive arm of the Government. This is because only the Executive commands the expertise to understand the intricacies of the problems which requires legislative response and has the mechanism to do so. The Parliament and the Legislatures can sit in judgment over the wisdom of the Executive in initiating legislation and can modify the provisions of the Bill brought by the Government. Ultimately, when it becomes the Law of the land, it can only be challenged

on the ground of transgressions in other provisions of the Constitution.

A system of checks and balances is a vital necessity in order to accomplish the desired ends of the doctrine of separation of powers. Such a system, contrary to popular notion, is not against the doctrine but necessary in order to reinforce its actual usage. It is, however, imperative to continuously question whether powers have been appropriately allocated and whether the checking mechanisms set up both between and within different organs of State sufficiently safeguard against the misuse of the powers so granted.

Of late, the issue of judicial activism is attracting the attention of constitutional experts, legal luminaries and others. Some parliamentarians and legislators are of the view that the Judiciary has at times been found overstepping its jurisdiction and entering into the Executive or the legislative domain. The proponents of judicial activism take it as an assertion of judicial power, a part of judicial review authority and the necessary in-built mechanism to uphold the Rule of Law and the principles of natural justice. It is always of utmost importance to have a proper understanding among the organs of State. If they overstep their assigned limits, each of them would suffer and in the process the ultimate victim will be the larger national interest. Looked at from this angle, there is no scope for any clash between the two organs while performing their tasks, for the goals of both are the same. Both the Legislature and the Judiciary are acting in unison in achieving the objectives of the Constitution and the society and

strengthening the constitutional scheme of checks and balances.

In the interest of harmonious and smooth functioning of various organs of the State, I strongly feel that no organ should encroach into the functions which essentially belong to another, nor should it abdicate its essential functions and thereby undermine the constitutional scheme of checks and balances. I would like to stress that each one of them must understand and appreciate the other's role in the right perspective and in consonance with the spirit of the Constitution. When institutions function strictly within the domain assigned to them, not only do they go up in public esteem, but they also create the ideal conditions for fortifying the entire system.

The principles of parliamentary democracy are based on the ideology that it is the people who are the only custodians of the Constitution. The institutions of governance are accountable to the Constitution as also to the people. A Constitution on its own is only a document, but it acquires life when the people who are entrusted to work it, operate its diverse provisions with care.

It is an indisputable fact that the principle of separation of powers is a pre-requisite for the effective functioning of a democracy. I am confident that the ideas and perspectives emerging at this Symposium on constitutional scheme of checks and balances will stimulate fruitful and purposive deliberations on this important subject.

माननीय राज्यपाल श्री शिवराज वी. पाटिल जी, माननीय मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत जी, राजस्थान विधान सभा के माननीय अध्यक्ष, श्री दीपेन्द्र सिंह शेखावत जी, माननीय मंत्रिगण और विधान सभा सचिवालय के सभी अधिकारियों और कर्मचारियों को जयपुर में भारत के विधायी निकायों के पीठासीन अधिकारियों के 76वें सम्मेलन की महत्ती सफलता के लिए हार्दिक धन्यवाद । यहां के निवासियों ने अपने स्वागत-सत्कार से हम सबका मन मोह लिया है । मैं उन्हें अपनी शुभकामनाएं देती हूँ ।

Thank you.

श्रीमती मीरा कुमार
माननीय लोक सभा अध्यक्ष
का
संवैधानिक नियंत्रण और निरीक्षण प्रणाली को सुदृढ़
करना
विषयक संगोष्ठी पर
जयपुर में

भाषण

Address
by
Smt. Meira Kumar
Hon'ble Speaker, Lok Sabha

at the
Symposium on "Strengthening Constitutional Scheme of Checks and Balances"
at
Jaipur

Lok Sabha Secretariat
New Delhi